अंतरा-शब्दशक्ति

बर्फ में दबी आग

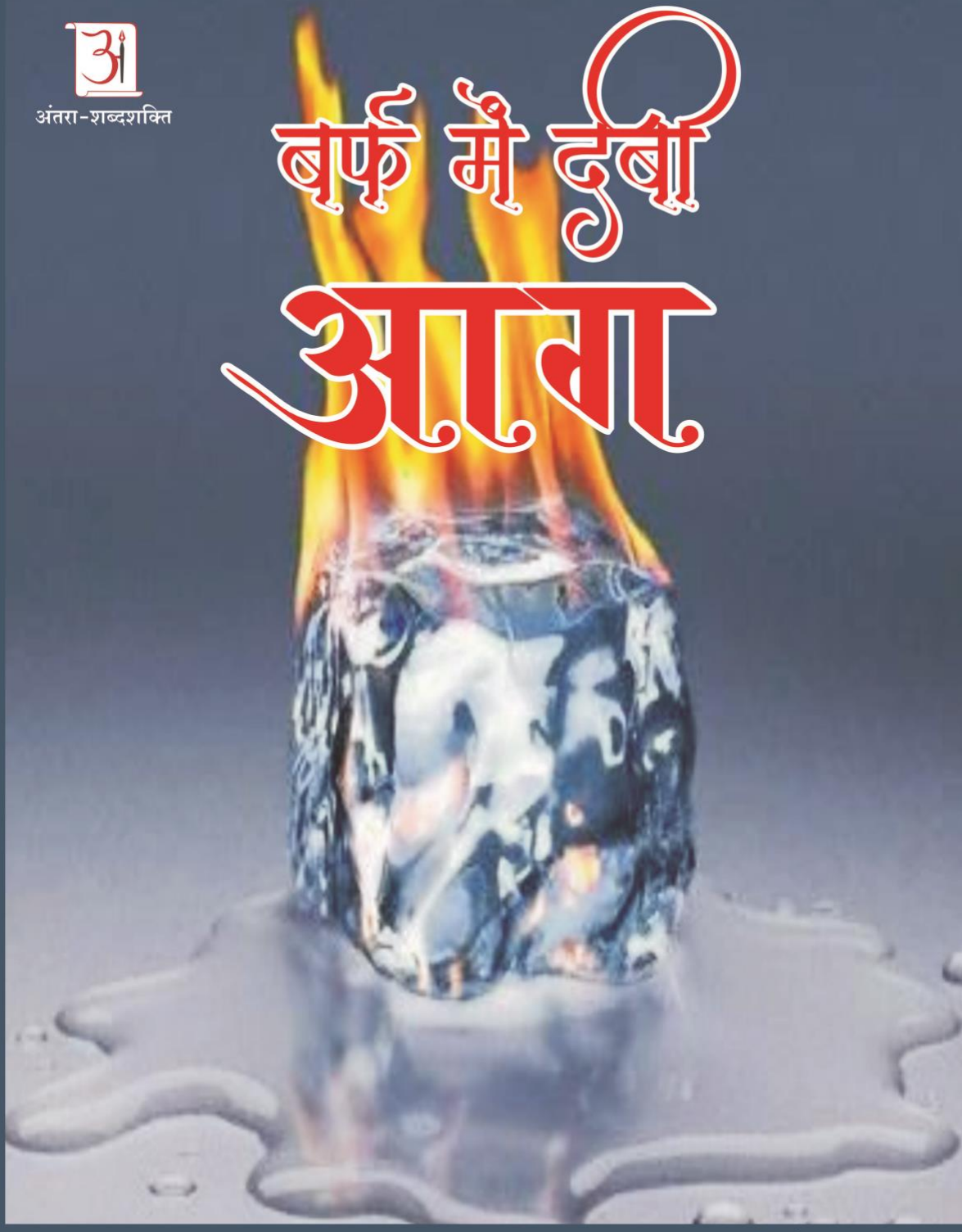

कथा संग्रह

डॉ. वंदना गुप्ता

बर्फ में दबी आग

(कथा संग्रह)

वंदना गुप्ता

अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन
वारासिवनी, मध्यप्रदेश

ISBN- 978-93-86666-34-5

अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन

मुख्य कार्यालय - १५ नेहरु चौक वारासिवनी, जिला बालाघाट (म।प्र) ४८१३३१

शाखा- एस-२०७, नवीन भवन, इंदौर प्रेस क्लब परिसर, इंदौर (म।प्र।) ४५२००१

दूरभाष- (कार्या।) ०७६३३-२५३१५९ (मो) ९४२४७६५२५९

अणुडाक- antrashabdshkti@gmail।com

अंतरताना- www।antrashabdshakti।com

प्रथम संस्करण २०१८ - वंदना गुप्ता

मूल्य - ४०।०० रुपये

आवरण चित्र- संदीप सोनी, वारासिवनी

मुद्रक- शैलू कम्प्यूटर्स, वारासिवनी

Barf me dabi aag by Vandana Gupta

वैधानिक चेतावनी - इस पुस्तक का सर्वाधिकार सुरक्षित है। लेखक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश को फोटोकापी एवं रिकार्डिंग सहित इलेक्ट्रोनिक अथवा मशीनी किसी भी माध्यम से अथवा संग्रहण और पुनर्प्रयोग की प्रणाली द्वारा किसी भी रूप में पुनरुत्पादित अथवा संचारित प्रसारित नहीं किया जा सकता है। प्रस्तुत पुस्तक की समस्त रचनाएँ लेखक द्वारा अन्तरा शब्द शक्ति प्रकाशन को प्रेषित की गई है अतः प्रत्येक रचना की मौलिकता के किसी भी दावे हेतु लेखक जिम्मेदार है। प्रस्तुत पुस्तक के घटनाक्रम पात्र, भाषाशैली एवं स्थान सभी लेखक की कल्पना है। किसी भी प्रकार के वाद-विवाद के लिए प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

मेरी कलम से,..

मैं गणित जैसे दुरूह विषय की विद्यार्थी एवं प्राध्यापिका रही हूँ। अंकों में उलझते हुए भी शब्दों से खेलते हुए सुकून की तलाश हमेशा रही है। बचपन से ही मनोभावों को डायरी के पन्नों में छुपाने की आदत रही है। कविताओं के रूप में। उन्हें प्रथम काव्य संग्रह 'खुद की तलाश में' के रूप में प्रकाशित करवा चुकी हूँ। द्वितीय प्रकाशन के रूप में 'बर्फ में दबी आग' कथा संग्रह आप सभी सुधीजनों को अर्पित कर रही हूँ। इसमें कुल ग्यारह कथा कहानियाँ हैं, जो जीवन की विसंगतियों से चुरायी हैं। खुशी, उदासी, प्रेम, पर्व, अलगाव, संस्कार और अपनत्व जैसे जिंदगी के रंगों से सराबोर ये कहानियां यदि आपके मन को छू सकीं तो मैं अपना लेखन सार्थक मानूँगी।

इस कृति को आपके कर कमलों तक पहुंचाने का श्रेय मेरे प्रोफेसर पति डॉ वीरेंद्र गुप्ता, मेरी बेटियाँ डॉ शिल्पा-वरुण कोठारी और डॉ शैली गुप्ता तथा बेटे इंजी। अंशुल गुप्ता को है जिन्होंने मुझे अपने सपनों के आसमान में पंख फैलाने का हौसला दिया। मेरे भाई वरुण गुप्ता ने मेरे लेखन कौशल से मेरा परिचय कराया और सतत उत्साहवर्धन किया। आप सुधीजनों को मेरी द्वितीय कृति अर्पित करते हुए आपके स्नेह और सुझाव की अपेक्षा है।

- डॉ वन्दना गुप्ता

अनुक्रमणिका

1. बदलते उसूल	5
2. नेपथ्य	6
3. कागज की कश्ती	7
4. दूर का संगीत	8
5. सुराख से झाँकती ज़िंदगी	9
6. पर्व के रंग	11
7. बर्फ में दबी आग	14

बदलते उसूल

पहली तनख्वाह मिलने की खुशी में अंतर्मन तक भीग गयी थी सुम,..। आखिर कितने वर्षों की मेहनत के बाद यहाँ तक पहुँची थी। वह ऑफिस से सीधे मार्केट गयी। घर पहुँचते ही उसने चहक कर सबको इकट्ठा कर लिया।

"यह तेरे लिए मेरी पहली तनख्वाह से खरीदा हुआ उपहार,.." पहला पैकेट उसने छोटी बहन की ओर बढ़ाया। दोनों के चेहरे पर बेशुमार खुशी थी। दूसरा पैकेट छोटे भाई को देते हुए उसके चेहरे पर खुशी के साथ जिम्मेदारी वाला भाव भी नज़र आया। तीसरा पैकेट पिताजी को दिया और कहा" आपने मुझे इस लायक बनाया कि मैं आज आपके लिए कुछ खरीद सकी, आपके सहयोग, आशीर्वाद और स्नेह के बिना मैं कुछ नहीं हूँ। कृतज्ञतास्वरूप मेरे स्नेह की तुच्छ भेंट स्वीकार कीजिए! पिता की आँखों मे आशा और स्नेह के असंख्य दीप जल उठे।

अंत में वह माँ की ओर मुखातिब हुई और एक पैकेट उनकी ओर बढ़ाया ही था कि माँ एकदम से पीछे हटते हुए बोलीं। "न न बेटा। हमें तेरी कमाई खाकर अधर्मी नहीं बनना। तेरा पैसा इकट्ठा होने दे, तेरी शादी में तुझे ही दे देंगे, हमें कुछ नहीं चाहिए।"

वह एकदम बुझ सी गयी। फिर उसने माँ का हाथ पकड़ा और सीधे उनकी आँखों में देख,..।

"माँ! एक बात बताओ यदि आपको पहला बेटा होता और आज वह कमाने लायक होता तो आपको ज्यादा खुशी होती न,..? उसकी कमाई पर आप अपना हक समझती और उसके दिए उपहार पर आपत्ति भी नहीं करतीं।"

माँ निरुत्तर देखती रहीं,.. वह आगे बोली,." मैं लड़की हूँ तो क्या आपने मेरी शिक्षा या परवरिश में कोई कमी की,..? या बेटे और बेटी के लिए कोई अलग मापदण्ड रखे? नहीं न,.। जब एक जैसा दिया है तो एक जैसा लेने में आपत्ति क्यों??? " वह थोड़ी उदास हो गयी थी। "शायद। इसी कारण लोग बेटी नहीं बेटा चाहते हैं,..। "

माँ अचानक ही सदियों का सफर कर आयीं। "नहीं मेरी लाडो,.. तूने मेरी आँखें खोल दी, मेरे लिए बेटे बेटी में कोई फर्क नहीं। बता क्या लायी है मेरे लिए,.." और उसने सुमन को गले से लगा लिया,..!

नेपथ्य

"रम्या! मेरे इस पुरस्कार की असली हकदार तुम हो, तुम मेरी प्रेरणा हो, तुम मेरी जिंदगी हो और तुम ही मेरे सृजन के बीज को अंकुरित, पल्लवित और पुष्पित करने वाली मेरी सब कुछ हो।"

"पर किशन! मुझे कौन जानता है? मैंने तुमसे सच्चा प्रेम किया, पर मुझे हमेशा ही पर्दे के पीछे रहना पड़ा। क्या तुम्हारा प्रेम कभी तुम्हें मेरे प्रति अपने कर्तव्य का बोध नहीं कराता?"

"मैंने हमेशा ही तुमसे प्रेम किया है, वो तो घर परिवार के सामने मजबूर था, या कायर था कि घर वालों को तुम्हारे बारे में बता नहीं पाया और दबाव में सुलेखा से शादी करनी पड़ी। सुलेखा भी तुम्हें जानती है, वो मेरी पत्नी है और तुम प्रेयसी हो। उसने मुझे कभी रोका भी नहीं, इसीलिए मैं तुम्हें समाज के सामने स्वीकार नहीं कर पाने के बावजूद सभी दायित्व निभाता आया हूँ।"

"मैंने कलियुग में जन्म लेकर अपने किशन से प्रेम किया है, शायद इसलिए द्वापर युग के राधा कृष्ण की तरह कोई हमारे प्रेम को कभी समझ नहीं पाएगा और स्वीकार भी नहीं करेगा। जाओ किशन आज भी मंच पर तुम्हारे साथ सुलेखा होगी और मैं दर्शक दीर्घा से तुम्हें देखती रहूँगी, मेरी नियति यही है।"

आज किशन को साहित्य के सर्वोच्च पुरस्कार से सम्मानित किया जाना था। शहर के सबसे महंगे होटल में कार्यक्रम का आयोजन था। कार्यक्रम प्रारम्भ होने में थोड़ा विलम्ब था, तो वह रम्या के रूम में आ गया था।

माइक पर उदघोषणा शुरू हो गई। किशन कोसा के क्रीम रंग के कुर्ते, सफेद चूड़ीदार और कंधे पर शाल डालकर मंच की ओर बढ़ने लगा, उसके साथ क्रीम कलर की लाल बॉर्डर की साड़ी पहने सुलेखा भी थी, उसके माथे पर लाल रंग की बड़ी सी

बिंदी थी। अचानक वीडियोग्राफी वाले ने रुकने का इशारा किया। सबने देखा किशन के क्रीम कुर्ते पर एक बड़ी सी हरे रंग की बिंदी चिपकी थी। सुलेखा ने रम्या की ओर नजर दौड़ाई।

फिर दर्शकों के बीच में से हरे रंग का सूट पहने रम्या धीरे धीरे आई और किशन के कुर्ते से बिंदी निकाल कर मस्तक पर लगा ली। आज किशन की रम्या को अनजाने ही पहचान मिल गई थी!

कागज की कश्ती

मेन गेट खोलते ही बारिश के बहते पानी के साथ कागज की बहुत सारी चिन्दियाँ आभा की चप्पल में अटक गयीं। ऑफिस से वैसे ही खराब मूड में निकली थी, फिर अचानक हुई बारिश में महानगर की ब्लॉक्ड नालियों के कारण सड़कों पर भरे हुए पानी में लोकल बस द्वारा दस किलोमीटर का सफर करते हुए दिल, दिमाग और देह तीनों ही थक चुके थे।

फ्लैट के दरवाजे पर कीचड़ देख गुस्सा आ गया,..। "गीता क्या है ये सब,..?" उसने मनु की आया को आवाज़ लगाई।

"जी दीदी वो मनु बाबा अपनी दादी के साथ कागज की नाव बनाकर पानी में,..।"

"अरे! गुस्सा मत कर, जल्दी फ्रेश हो जा। बालकनी में बैठकर चाय पकौड़े का आनंद लेते हैं।" गीता की बात बीच में काटकर सासू माँ बोलीं।

मन ही मन बड़बड़ाती वह फ्लैट में घुस गयी,..! सासू माँ अपने बीमार बेटे से मिलने आयी हुईं थीं, उसे उनकी दखलंदाजी ज़रा भी पसंद नहीं थी।

बेडरूम में पति आराम से टी वी देख रहे थे। "मनु कहाँ है,.?" बीमार पति से ज्यादा उसे बेटे की चिंता थी।

"दोस्तों के साथ बारिश का आनन्द लेने गया है।" पति का बेपरवाह सा अंदाज़ उसका गुस्सा और बढ़ा गया। आनन फानन में कपड़े बदलकर बालकनी में पहुँची। सासू माँ को आराम से बैठे देखकर बिफर पड़ी। "ये पहले से ही बीमार हैं, मेरी छुट्टियाँ खत्म होने को हैं और मौसम की पहली बारिश। आपने मनु को जाने

क्यों दिया? वह बीमार पड़ गया तो,.? आप तो हमेशा रहने वाली हो नहीं, ये महानगर का कल्चर आपको सुहाता नहीं,.. परेशान तो मुझे ही होना है।" वह आगे और भी बोलती, किन्तु पीछे से पति ने आकर उसका हाथ पकड़कर दूर इशारा किया।

बारिश के इकट्ठे हुए पानी में बिल्डिंग के सारे बच्चे दादी माँ की बनायी हुई कागज़ की कश्तियाँ तैराते हुए आनन्द में निमग्न थे,..!

अब आभा ने मनु और उसके नन्हें दोस्तों के चेहरे पर पसरी खुशी को देखा। पतिदेव और सासू माँ की ओर कृतज्ञ भाव से देखते हुए उसके कानों में जगजीत सिंह के शब्द गूंज उठे। "वो कागज की कश्ती। वो बारिश का पानी,...!

दूर का संगीत

जैसे ही रोमेश ऑफिस के लिए निकला। नीरू ने फटाफट आधा अधूरा काम निबटाया और चल पड़ी सामने की बिल्डिंग में, अपनी नयी अनजान सखी से परिचय करने,..!

चाय का बड़ा कप, टोस्ट, अखबार, रेडियो विविध भारती और उसका मनपसंद बालकनी का कोना, ये नीरू की सुबह की शुरुआत हुआ करती थी। जबसे सामने वाले फ्लैट में ये नया कपल रहने आया है, उसके इस एकांत में खलल पड़ने लगा है। चाहे अनचाहे उसका ध्यान उधर चला ही जाता था। सुबह वे दोनों बालकनी में साथ में चाय पीते, गुफ्तगूं करते दिख जाते थे। साथ में ही ऑफिस जाते और शाम को भी कभी कभी साथ में बाहर आते जाते नज़र आ जाते और नीरू सोच में पड़ जाती थी कि रोमेश के लिए उसकी कोई अहमियत ही नहीं है। मशीन सरीखी जिंदगी है। वह सुबह उठ कर नाश्ता बना लेती तब रोमेश सोकर उठते, वह तैयार होते, तब तक टिफ़िन पैक कर देती। उनके जाने के बाद बचे खुचे काम निबटा कर उनके लौटने का इंतज़ार करते हुए दिन गुजर जाता।

उस प्रेमी युगल को देख उसे अपना जीवन नीरस लगने लगा था। आज उसके पति को अकेले जाते देख उसने सोच लिया था कि आज मौका है, आज वह अपनी इस नयी पड़ौसन से मिलेगी।

कॉलबेल बजते ही उसने दरवाज़ा खोला और नीरू को देखते ही खुश हो गयी। "आइए। मैं कबसे आपसे मिलने की सोचती थी, अच्छा हुआ आज आप ही आ गयीं। मैं आपको दीदी बोलूँ?"

"हाँ! हाँ! बिल्कुल। मैं भी तुम्हें रोज देखती थी, आज तुम गयीं नहीं तो सोचा कि बीमार तो नहीं हो, इसलिए पूछने चली आयी।"

"दीदी मैं बिल्कुल ठीक हूँ, रोज आपको देखकर सोचती थी कि आपकी लाइफ कितनी अच्छी है, अपने लिए, अपने हिसाब से जीने का समय तो मिलता है। मैं तो रोज मशीन की तरह लगी रहती हूँ, ये हर समय साथ रहते हैं तो आज झूठमूठ बहाना करके घर रुक गयी कि आपकी तरह कुछ समय अपने लिए जी सकूँ।"

नीरू सोचने लगी। "सच। दूर का संगीत ही कर्णप्रिय होता है,..!"

सुराख से झाँकती ज़िंदगी

मम्मा से लड़कर, गुस्सा होकर अपनी सहेली के घर गयी स्वरा तुरन्त ही लौट आयी थी। रह रहकर दोनों घरों की तस्वीर उसकी आँखों के सामने फ़िल्म की तरह चल रही थी। एक तरफ अपनी जिद, अपना गुस्सा, अपनी इच्छाएं, पापा की विवशता और मम्मा का मौन संघर्ष। और दूसरी तरफ बचपन की खास दोस्त अद्विका की चकाचौंध भरी जिंदगी, उसके मॉम डैड की रोमांटिक लाइफ,.. सब कुछ।

वह एक अल्हड़ और नादान सी माता पिता की लाडली बेटी उम्र के उस दौर से गुजर रही थी जब आँखों में उगे सपने दिल में आकार लेने लगते हैं और दिमाग उनकी तसवीर जिन्दगी के कैनवास पर उतार लेना चाहता है। उसे एक ही बात परेशान करती थी कि अद्विका और उसके पापा एक ही ऑफिस में एक ही पद पर कार्यरत हैं फिर दोनों परिवारों की जीवनचर्या में इतनी असमानता क्यों?

अद्रिका के पास एक से बढ़कर एक ड्रेसेस, बैग्स, सैंडल्स अच्छा मोबाइल और उसके पास।?? गिनती की ड्रेसेस, एक ही कॉलेज बैग ।

माता पिता के सामने यदा कदा उसकी परेशानी नाराजगी के रूप में लफ्जों में बयां हो जाती फिर खुद ही शर्मिंदा हो जाती । ऐसा नहीं कि उसके सपनों की उड़ान बहुत ऊँची हो, उसकी परवरिश ऐसे माहौल में हुई थी जहाँ जमीन से जुड़े रहकर आसमान के ख्वाब देखे जाते हैं और दूसरी तरफ अद्रिका थी जो आसमान में ही उड़ती रहती थी। एक स्वाभाविक ईर्ष्या और काम्प्लेक्स जन्म ले रहा था, वो जितना ही झटकने की कोशिश करती उतना ही वो उसे जकड़ने लगता था ।

आज भी उसने नए मोबाइल की मांग की थी, और मम्मी ने उससे ज्यादा प्राथमिकता वाली जरूरतों की फेहरिस्त गिनवा दी थी। आज उसका बहुत दिनों से रोका हुआ नैराश्य उसके स्वभाव के विपरीत तेज़ आवाज़ में गुस्सा बन फूट पड़ा था । उसके मुख से निकले कठोर शब्द मम्मी के दिल पर हथौड़े की तरह गिरकर चोट पहुँचा रहे थे। वह खुद भी ऐसा नहीं चाहती थी पर तीर तो तरकश से निकल चुका था। उसमें यह देखने की हिम्मत नहीं थी कि माँ उस चोट से कितना घायल हो गईं हैं और न ही हमेशा की तरह इस स्थिति में उसके प्रति माँ का समझाइश भरा प्यार वह समेट पाने में सक्षम महसूस कर पा रही थी खुद को। माँ का हाथ झटकने के साथ ही उसने झटक दिया था। माँ के प्यार को, उनकी बेबसी को और किशोरावस्थाजन्य समस्याओं से गुजर रहे ऐसे कितने ही बच्चों को समझती उनकी माओं की व्यवहार थेरैपी को भी।

आशा के विपरीत अद्रिका के घर पर लगा ताला उसे चिढ़ाता सा लगा, पलटी ही थी कि अंदर कुछ खटर पटर की आवाज़ ने भयमिश्रित चिंता को जन्म दे दिया। आजकल इलाक़े में चोरियां भी बहुत हो रही थीं। थोड़ी हिम्मत कर दरवाजे के की होल में से अंदर झाँका। अचानक ही सुंदर नक्काशीदार दरवाजा एक जंग लगे दरवाज़े में बदल गया। अद्रिका की चकाचौंध भरी जिन्दगी की नंगी और कड़वी हकीकत सुराख में से झांकती आँखों के सामने उघड़ी पड़ी थी ।

घर पहुंचकर वह सीधी माँ के पास गई, जो उसके थोड़ी देर पहले के अप्रत्याशित व्यवहार से अभी तक खामोश और चिन्तित बैठी थी। वह माँ की गोद में गिरकर रोने लगी। "मम्मा! मुझे माफ़ कर दो। मुझे नहीं चाहिए नया मोबाइल, कुछ भी नहीं चाहिए, मम्मा अब कभी आपका दिल नहीं दुखाऊंगी। आप वर्ल्ड की बेस्ट मम्मा हो और पापा वर्ल्ड के बेस्ट पापा। "

माँ ने उसे बाँहों में भर लिया। "हाँ मेरी बच्ची, क्योंकि वर्ल्ड की बेस्ट बिटिया जो हमारे पास है।"

"मम्मा। वो,.वो,.. मैं अद्रिका के घर गई थी, वो नहीं थी घर पर, अंकल भी नहीं थे। ताला लगा था। पर मम्मी वो वहाँ पर। वो आंटी और पापा के वो खड़ूस से गन्दी मूँछों वाले बॉस अंकल अंदर,.." आगे के शब्द उसकी रुलाई में कहीं खो गए। उसके विश्वास की तरह।

उसे अपने प्यार की छोटी सी दुनिया में समेटती माँ फिर से जड़ हो गई। वक़्त से पहले जिंदगी की एक कड़वी सच्चाई से रूबरू हो चुकी बेटी की समझदारी पर खुश होने के बजाय भविष्य में उठने वाले अनगिनत अविश्वास और प्रश्नों के कारण बेटी के सपनों और यथार्थ की जंग देखती हुई माँ की आँखें अपलक शून्य में निहार रही थीं,..।

पर्व के रंग

दीवाली की रात। सूरज और चाँद मानो एक साथ सम्पूर्ण निहारिका लेकर धरती पर जगमगाने चले आए हों। मन के भीतर भी और बाहर भी उत्सव का उल्लास छाया हुआ । सृष्टि का कण कण पर्वमयी हो सप्तरंगी इंद्रधनुष सी छटा बिखेरता हुआ, तन और मन को पुलकित करने का पर्याप्त अवसर प्रदान कर रहा था। इन सबके बीच शिखर, बारह वर्षीय चंचल बालक एकदम गुमसुम सा बैठा रहा। पाँच वर्ष बड़ी बहन शीतल के सारे प्रयास विफल हो गए। वह आतिशबाजी के लिए तैयार ही नहीं हुआ ।

"मम्मा! देखो न शिखर को आप ही समझाओ अब, पटाखे क्या मैं अकेले चलाऊंगी।?" शीतल ने मुझे पुकारा।

"तुमसे कहा था न कि बच्चे हैं, इन्हें आनंदपूर्वक दीवाली मना लेने दो, पर पर्यावरण का ठेका तो तुम्हीं ने ले रखा है। क्या जरूरत थी बच्चों को आतिशबाजी के लिए टोकने की?? अब देखो वो नाराज बैठा है, समझाओ उसे।" मैंने इन्हें आवाज़ दी ।

अब मम्मी पापा और दीदी तीनों मिल कर उसे मनाने में व्यस्त। पर वह पता नहीं किस सोच में गुम,..बड़ी देर बाद बोला,.. "क्या सच में उन बच्चों को नहीं पता कि दीवाली क्या होती है और उनके मम्मी पापा उन्हें क्यूँ छोड़ जाते हैं?"

ओह! तो ये बात है। इस बार पुराने कपड़ों से जब पाँच सूटकेस भर गए तो मैंने विचार किया कि सेवाधाम आश्रम जाकर ये कपड़े दे आते हैं, सेवाधाम मतलब निराश्रितों का आश्रय। संजीव भाई निःस्वार्थ भाव से आश्रम चला रहे हैं। पुराने कपड़ों से बर्तन लेना मुझे पसन्द नहीं और कामवाली बाई को पिछली बार दिए ढेर सारे कपड़ों में से कुछ मैंने ठेले पर बिकते देखे तो मन दुःखी हो गया था। अपने घर के कपड़ों को पहचानने में मैं गलत नहीं हो सकती थी। सो इस बार ये अनूठा अनुभव होगा, बच्चे भी कुछ नया देखेंगे और सीखेंगे। पतिदेव भी सहर्ष तैयार हो गए। छोटी दीवाली के दिन सुबह जल्दी ही तैयार हो पहले बाजार से फल और मिठाईयां खरीदीं और हम सब निकल पड़े गंतव्य की ओर।

एक घण्टे बाद वहाँ पहुँचकर सभी खुश थे। संजीव भाई ने स्वागत किया और प्रयोजन जान वे भी खुश हुए। उन्होंने पूरा आश्रम घुमाया। वे बताते जा रहे थे कि किस तरह एक छोटी सी शुरुआत से आज इस मुकाम तक पहुंच गए हैं। आश्रम की रसोई में भोजन चल रहा था, वहीं भोजन किया। वहाँ रहने वाली महिलाएं ही बारी बारी से रसोई की जिम्मेदारी सम्भालती थीं। कभी कोई दानदाता दाल, चावल, गेहूँ, सब्जियाँ या आर्थिक मदद भी दे देते थे। एक वार्ड पुरुषों का था, कुछ निराश्रित थे, कुछ उपेक्षित और कुछ विक्षिप्त भी थे। सभी को मिठाई बांटी, वे बहुत खुश थे। अगले हिस्से में महिलाएँ थी, वहाँ भी आधी से अधिक मानसिक रोगी लग रहीं थी। अंत में हम बच्चों के वार्ड में पहुँचे। यहाँ की स्थिति विचलित करने वाली थी। दो माह से लेकर अट्ठारह वर्ष की उम्र तक के बच्चे थे। कहीं विभिन्न मुखमुद्राएं और कहीं भावहीन चेहरे। बच्चों ने खूब खुश होकर मिठाई खाई। शिखर और शीतल भी खुश थे, बच्चों से बात कर रहे थे। अचानक एक बच्चे ने पूछ लिया। "तुम यहाँ रहने आए हो?"

"नहीं, हम दीवाली पर तुमसे मिलने आए हैं" शिखर ने कहा।

"अच्छा ये तुम्हारे साथ कौन हैं और दीवाली क्या होती है?" उसका अगला प्रश्न था।

"ये मेरे मम्मी पापा और दीदी हैं, दीदी तुम बताओ न दीवाली क्या होती है।" मैंने देखा कि शिखर के चेहरे का रंग बदल रहा था।

"अच्छा! मम्मी,..पापा,..?" वो कुछ सोचता हुआ निर्विकार भाव से हमारी ओर देखकर बिना जवाब की प्रतीक्षा किए आगे बढ़ गया। शिखर के चेहरे पर थोड़ी देर पहले जो इंद्रधनुष था, वो मानो एकाकार हो पुनः सफेद हो गया।

हम लोग भी विचलित हो गए थे, अब ज्यादा देर वहाँ रुक पाना असहनीय हो रहा था। संजीव भाई को साधुवाद देकर उन्हें भविष्य में सहयोग का वादा कर हम लौट आये।

आज दिवाली के दिन सुबह से व्यस्त होने से मैं मेरे बेटे की पीड़ा देख ही नहीं पाई। मैंने सोचा था कि हर बार की तरह वह उत्साहित हो पर्व का आनन्द ले रहा होगा। मैं खुद को अपराधी समझने लगी कि अनजाने ही मैंने मेरे बच्चे को कितना कष्ट पहुँचाया। मैं विचारमग्न ही थी कि अचानक पतिदेव बोले,.."तो मेरा बेटा अपने उस अनजान दोस्त के लिए दुःखी है, चल उसी के साथ पटाखे फोड़ेंगे।"

"अरे पर तीस किलोमीटर दूर जाना इस समय।" मेरी बात काटते हुए इन्होंने कहा।

"चुपचाप पटाखे लो, मिठाई लो और गाड़ी में बैठो।" शिखर के चेहरे पर स्मित रेखा देख मैं चुपचाप गाड़ी में बैठ गई। पन्द्रह मिनट बाद हम शहर के मूक बधिर और मानसिक दिव्यांग बच्चों के बोर्डिंग स्कूल में थे। शिखर के चेहरे पर प्रश्नचिन्ह देख इन्होंने उसका हाथ पकड़ा और गाड़ी से उतारते हुए बोले। "आओ बेटा यहाँ और भी नए दोस्त मिलेंगे।"

रोशनी से स्कूल जगमगा रहा था। अंदर पहुँचे। वहाँ का स्टाफ भी प्रसन्न हुआ। सब बच्चों से मिलकर शिखर भी खुश था।

सब बच्चे उल्लासित हो पर्व के रंग से सराबोर हो दीवाली मना रहे थे, मिठाई खा रहे थे और आतिशबाजी चला रहे थे। शिखर और शीतल की खुशी आज हमेशा से अलग थी। यह दीवाली उन्हें जिंदगी का एक नया ही रंग दिखा गई थी। उत्सव का असली रंग। प्यार, अपनत्व, उत्साह और करुणा का समन्वय हो तभी त्यौहार का असली आनंद है।

बच्चों को खुश देख इन्होंने हौले से मेरा हाथ दबाया और बोले। "वाह मेरी जानू! मान गया तुम्हें, क्या आईडिया दिया। इस बहाने बच्चे कितना कुछ सीख गए। जिंदगी का अभाव भी और प्रभाव भी, अब उन्हें मिली सुख-सुविधाओं की कीमत भी समझेंगे

और इस उम्र में महसूस की हुई सम्वेदनाएँ उन्हें जिंदगी भर विनम्र और ईश्वर के प्रति कृतज्ञ रहना सिखाएंगी,..।" और मैं इन सबसे बेखबर बच्चों की खुशी में डूबकर मेरी दिवंगत माँ को श्रद्धासुमन अर्पित कर रही थी। आखिर यह बचपन में मुझे दी गई उन्हीं की सीख थी। मानो तो गैर भी अपने हैं और न मानो तो अपने भी पराए हैं,..!!

बर्फ में दबी आग

बारिश थम चुकी थी। बालकनी में झूले की गति के समान दोलायमान विचारों को विराम देने की कोशिश में कृति की नजर गमले में लगे पौधे की एक पत्ती की नोंक पर लटकी उस आखिरी बून्द पर टिक गयी, जो टपकते टपकते रह गयी थी और अपने जड़त्व और गुरुत्वाकर्षण के बीच संघर्षरत थी ।

उस बून्द के साथ उसे एक साम्य सा महसूस हुआ। वह भी तो आज तक खुद से ही जूझ रही है, जैसा सोचती, वैसा कर नहीं पाती, हर बार टूटती पर दूसरे ही पल दुगुने उत्साह से जुट जाती एक नए संकल्प के साथ ।

कृति बचपन से ही मेधावी रही है । शिक्षण हो या गृहकार्य। दोनों में समान रुचि और कुशलता, परिवार में कोई धार्मिक प्रसंग हो या शादी विवाह, उसकी उपस्थिति के बिना फ़ीके ही रहते। फुर्ती और हाजिरजवाबी भी इतनी कि लोग दाँतों तले ऊँगली दबा लेते । स्कूल कॉलेज में शिक्षकों की प्रिय और दोस्तों की परमप्रिय कृति अपने मन में विचारों का कितना सुलगता लावा छुपाए है, ये कोई नहीं जानता था ।

वह एक मध्यमवर्गीय परम्परावादी परिवार की बेटी थी, जिसने बचपन से घर में महिलाओं को अपने अरमान कुचलते देखा था। बस यहीं से उसके मन में कहीं गहरे एक विद्रोह की चिंगारी सुलगने लगी। बेटे और बेटी की परवरिश में यूँ तो कोई भेद न था पर अवसरों की उपलब्धता में एक निश्चित अंतर परिलक्षित होता था। जब मनचाहे कोर्स में दाखिले की मनाही हुई तो उसकी निगाह शिक्षा से वंचित रहे बच्चों पर गई और उसने समझौता कर लिया था, किन्तु अपनी लक्ष्यप्राप्ति के लिए परिवार से बगावत उसके जीवन का पहला संघर्ष था और घरवालों की इच्छा के विरुद्ध उसने अन्य शहर में नौकरी जॉइन कर ली थी।

वह और कुशाग्र एक साथ पढ़ते थे। दोस्ती और प्यार के बाद शादी तक का सफर ख्वाब सा गुजर गया। जमीनी हकीकत से रूबरू होते ही उनका रिश्ता हम-तुम से कब तू-तू मैं-मैं में बदल गया, वे जान नहीं पाए। नौकरी और बड़े शहर की

भागमभाग भरी जिंदगी के बीच व्यवस्थित घर की जिम्मेदारी किसकी।? आज के जमाने का बहुत बड़ा प्रश्न। कुशाग्र पुरुषोचित अहम का मारा और कृति नारी शिक्षा और स्वतंत्रता की पक्षधर। दोनों को अपनी अपनी जिंदगी अपने घर से ज्यादा प्यारी। यहाँ फिर कृति को ही झुकना था। घर-परिवार के लिए वो झुकी, परन्तु मन में एक नया ज्वालामुखी सुलगने लगा था।

पूरी जिंदगी तो होम कर दी, खुद के लिए चाहते हुए भी कुछ अलग सा कर न पाई, क्या यह उसकी पराजय थी? उसने देखा वह बून्द अभी तक पत्ती की नोंक पर लटकी अपने अस्तित्व के लिए संघर्षरत थी।

माँ बनने के बाद उसे महसूस हुआ कि गाहे बगाहे एक लावा तो उसके भीतर अभी भी धधकता था, किन्तु उसकी ऊष्णता अब मानो शीतलता का आवरण ओढ़ सुहाने लगी थी। बेटी की नृत्य-संगीत और चित्रकारी में रुचि देख उसने उसे स्कूल के बाद क्लास तक लाने, ले जाने का जिम्मा ले लिया था। बेटा भी होनहार निकला। दोनों ही कक्षा में अव्वल आने के साथ अन्य गतिविधियों में भी उपलब्धि हासिल करते। अपने पारिवारिक, सामाजिक और शासकीय दायित्व निभाते वह थककर चूर हो जाती, फिर भी पत्नीधर्म निभाना नहीं भूली, हाँ एक मलाल रह जाता कि कभी तो पतियों को भी अपना धर्म निभाना चाहिए?? उसके मन पर जमी बर्फ के भीतर एक लावा सुलगता ही रहा और खुद से संघर्ष चलता रहा।

बेटी डॉक्टर और बेटा कंप्यूटर इंजीनियर बन गया था। बेटी की नई जिंदगी की शुरुआत फिर एक संघर्ष थी उसके लिए। कुशाग्र की आपत्ति और बेटी की जिद में फिर से एक पत्नी और माँ की लड़ाई थी। जीत माँ की हुई क्योंकि उसने सोच लिया था कि बेटी अपनी जिंदगी भरपूर जिएगी और अपने सपनों से कोई समझौता नहीं करेगी। बेटे को भी विदेश से गूगल कम्पनी से अच्छा ऑफर मिला, उसे भी अपने मन पर पत्थर रख उसके सपनों की उड़ान पूरी करने सात समंदर पार भेज दिया।

अब जिन्दगी एकदम खाली थी। कभी वह बालगृह जाती और अनाथ बच्चों को खिलौने, मिठाई और किताबों के साथ ढेर सारा दुलार बाँट आती। कभी वृद्धाश्रम जाती और बुजुर्गों को फल, कम्बल और कपड़ों के साथ खूब सारा अपनापन देकर ढेरों आशीष ले आती। निराश्रितों के पुनर्वास हेतु सेवारत संस्थाओं को भी खुलकर दान देती और कभी कभी मंदिर के बाहर बैठे भिखारियों को भोजन दे आती।

उसे थोड़ा सा सुकून मिलता था। जब भूखे को खाना , नंगे को कपड़े, बेघर को घर मिलते देखती। सबको जीने के लिए संघर्ष करते देखती, सहारा मिलते भी देखती। किन्तु अपने मन के भीतर कुलबुला रहे सवालों का जवाब नहीं ढूंढ पाती

थी। देखने वाले उससे रश्क करते, किन्तु वह खुद ही नहीं जान पा रही थी कि उसकी इस लड़ाई का अंत है भी या नही? उसकी संघर्ष यात्रा का विराम है या ये अंतहीन यात्रा है??

वह सोच में गुम पता नहीं कब तक बैठी रहती यदि कुशाग्र कॉफी और बिस्किट की ट्रे लेकर उसके पास आकर नहीं बैठता। उसे कॉफ़ी का मग पकड़ाते हुए कुशाग्र बोला। "सुनो,..! क्या तुम सोचते सोचते थक नहीं जाती हो,..?"

"अब तो आदत सी हो गयी है।" वह फीकी सी मुस्कुरा दी।

"आदतें बदल भी तो सकती हैं।"

"किसके लिए बदलूँ?"

"बंदा खिदमत में हाजिर है।" कुशाग्र शरारत पर उतर आया था।

एक पल के लिए उसे विश्वास नहीं हुआ।

"क्या,..! सच,..??" वह इसी पल के लिए तो तरसती रही जिंदगी भर।

"तुमने मेरी और बच्चों की खुशी के लिए पूरी उम्र लगा दी। कर्तव्य और जिम्मेदारी को अपने सपनों से ऊपर रखा। फिर भी कभी कोई शिकन नहीं, कोई उफ्फ तक नहीं।" कहते हुए कुशाग्र ने उसकी पलकों की कोरों पर झिलमिलाते हुए मोतियों पर अपने अधर रख दिये।

सालों से धधक रहा लावा फूट पड़ा और उसकी ऊष्मा से मन पर जमी बर्फ भी पिघलकर आँखों से बह निकली। कुशाग्र की बाँहों में समाते हुए उसने देखा कि पत्ती पर लटकी बून्द को कहीं से एक चिड़िया ने आकर अपनी चोंच में ले लिया है।

उसे भी अपने संघर्ष का प्रतिफल मिल गया था,...!!

व्यक्तित्व दर्पण

नाम - डॉ. वन्दना गुप्ता

जन्म - 13 जनवरी 1964, उज्जैन (म.प्र.)

शिक्षा - एम.एस.सी., एम.फिल, पी.एच.डी. (गणित)

पता -(कार्यालय) - प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष
गणित विभाग, शास.कालिदास कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय
उज्जैन (म.प्र.)
-(निवास) - 22, निर्माण नगर, दशहरा मैदान, उज्जैन

मो. - 9827535043

ई मेल - drvg1964@gmail.com

प्रकाशन - खुद की तलाश में (काव्य संग्रह)

सम्मान -1. शाजापुर महाविद्यालय में कार्यरत् रहने के दौरान बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' जयंती समारोह में मध्यप्रदेश साहित्य परिषद हेतु काव्य पाठ हेतु पुरस्कृत।

2. पिट्सबर्ग में ऑनलाइन प्रकाशित अंतर्राष्ट्रीय द्वैभाषिक पत्रिका सेतु द्वारा आयोजित अंतर्राष्ट्रीय काव्य प्रतियोगिता 2016 में प्रथम पुरस्कार से सम्मानित।

यदि आप अंग्रेजी में हस्ताक्षर करते हैं तो निवेदन है कि 'हिन्दी में हस्ताक्षर करें', आपकी यह छोटी-सी कोशिश हिन्दी को राजभाषा से राष्ट्रभाषा बनाने में अमूल्य योगदान देगी ।

मातृभाषा वैचारिक महाकुम्भ
www.matrubhashaa.com

अन्तरा शब्दशक्ति
www.antrashabdshakti.com

१५, नेहरु चौक, मेन रोड वारासिवनी,
जि. बालाघाट (म.प्र.) पिन ४८१३३१,
संपर्क- ९४२४७६५२५९,
अणुडाक: antrashabdshakti@gmail.com

978-93-86666-34-5

मूल्य- 40/-